Origional Research Article **Grameen Bharat Samvad**
ISSN:……(Online) | Volume -1| Issue- 1| January-February 2025|pp.1-5
Bimonthly, Hindi language, Blind Peer Reviewed E Research Journal

भारत के पारंपरिक लोक चित्रों का आधार ग्रामीण जनजीवन

डॉ. सरिता पाण्डेय, सहायक प्राध्यापिक,
एकलव्य विश्वविद्यालय दमोह, मध्य प्रदेश
Email- sarita05kapil18@gmail.com

सारांश

लोक चित्रों में चित्र किसी एक व्यक्ति की भावनाओं पर नहीं बल्कि समस्त समाज की भावनाओं से प्रेरित होकर बनाये जाते हैं। लोक कलाकार सदैव अपने समाज परम्परा के वातावरण में रहकर चित्रों का निर्माण करता है जहाँ उसका कोई प्रतिद्वन्दी नहीं होता। प्रत्येक समाज में आवश्यकता अनुसार परम्पराओं में जो बदलाव आते हैं उन्हें भी परम्पराओं के साथ लोक कला में सुधार कर दिये जाते हैं। लोक कला व्यक्ति के विकास का माध्यम है। लोक कला निरन्तर नवीन सृजन एवं विकास कि एक उचित प्रक्रिया है। लोक संस्कृति मनुष्य के जीवन के संस्कार है। जो वह अपने साथ लेकर जीवन के सफर में आगे बढ़ता है। यह संस्कृति गाँवो, शहरों में समान रूप से विद्यमान है। यह व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास का आधार है। लोक कला के द्वारा व्यक्ति अपने संस्कारों, प्रेम, करुणा के भावों, क्षमा, अहिंसा के विचारों को अपने व्यक्तित्व में लाने का प्रयास करता है।

लोक कला मानव के जीवन में ईश्वर पर विश्वास करने की प्रेरणा देती है। लोक कला मंगल भावों से ओत-प्रोत यह कलाकार की तुलिका में भरे रंगों से चित्रों को ऐसे स्वरूप को प्रदान करती है, मानों स्वयं ईश्वर का आर्शीवाद हो। इसे देखने वाले दर्शकों को ये कला हृदय की गहराई तक छू जाती है। जीवन में सर्वश्रेष्ठ को प्राप्त करने और उसका उपयोग करने की प्रवृत्ति केवल मानव के स्वभाव में है। हम सभी ऐसी परिस्थियों में उत्पन्न नहीं होते जहाँ आरम्भ से अंत तक केवल सुख ही मिले इसलिये हमें दुख में अभाव में विपरित परिस्थिति में कैसे एक सर्वश्रेष्ठ मानव बनना है, ये हम लोक कलाकारों से सीख सकते हैं। इस प्रकार लोक कला मानसिक विकास, सामाजिक विकास, आध्यात्मिक विकास के लिये हमेशा से प्रेरणा की श्रोत बनी।

मुख्य शब्दावली: ग्रामीण जनजीवन, परम्परा, संस्कृति, लोककला, अध्यात्म।

परिचय

चित्रकला परम्परा का इतिहास मानव सभ्यता के विकास का इतिहास है। यह परम्परा आज की नहीं है बल्कि हमारे पूर्वजों से यह हमें विरासत स्वरूप प्राप्त हुयी है। वह समय जब मनुष्य ने प्रकृति की गोद में आँख खोली उस समय से ही उसने अपने मन के भावों को व्यक्त करने के लिये चित्रों को आधार बनाया। इस समय के मानव के पास कोई संसाधन नहीं था। प्रकृति द्वारा कभी उसे कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता था तो कभी प्रकृति उसे आनन्दमयी परिस्थितियाँ प्रदान करती थी। इन परिस्थितियों को अपने मनोरंजन के लिये, तो कभी आखेट के लिये, कभी एक दूसरे के भावों को जानने के लिये, कभी एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने के लिए वह चित्रों का सहारा लिया करता था। यह उनके द्वारा बनाये गये गुफा चित्रों में देखा जा सकता है, जिनमें टेढ़ी-मेढी रेखाओं द्वारा कई चित्र, बनाये गये हैं जो उस समय की मानव सभ्यता के प्रमाण हैं। आज भी पूरे विश्व में इन चित्रों के 6 केन्द्र स्थित हैं जिनमें से एक केन्द्र भारत है।

यद्यपि संसार में प्राचीन चित्रकला के नमूने हमें लगभग 30 हजार वर्ष पूर्व के मिलते है किन्तु जिन भारतीय शैल चित्रों के दर्पण में हम प्रागैतिहासिक मानव की

ISSN:.....(Online) | Volume -1| Issue- 1| January-February 2025|pp.1-5
Bimonthly, Hindi language, Blind Peer Reviewed E Research Journal

गतिविधियाँ निहारेंगे वे वर्तमान जानकारी के अनुसार लगभग 10 हजार वर्षों से अधिक प्राचीनता वाले नहीं हैं। इस प्रकार वर्तमान संदर्भ में प्रागैतिहासिक मानव से तात्पर्य मध्य पाषाण कालीन संस्कृति के उस संवाहक से है जो भारत में 10 हजार से 5 हजार वर्ष पूर्व आखेटक और भोजन संग्राहक की वृत्ति से आजीविका चलाता था। यहीं से चित्रों की परम्परा ने जन्म लिया मानव के जीवन में इसी प्रकार किसी भी देश की अपनी एक परस्परा संस्कृति हमेशा से चली आयी है जो कहीं ना कहीं उस देश के इतिहास का आधार होती है। इतिहास को अगर देखा जाये तो वह परम्परा जितना प्राचीन नहीं हो सकता। परम्परा अपने अन्दर कई हजारों वर्षों से चली आ रही संस्कार, रीति-रिवाज को संजोये हुये इन संस्कारों को परम्परा द्वारा ही पीढ़ी-दर-पीढी तक पहुँचाया जाता है। पाश्चात्य देशों की भाँति भारत की परस्परा संस्कृति को जानने के लिये इतिहास लेखन की परिपाटी नहीं थी, फिर भी उस समय के ग्रन्थों रामायण, महाभारत में यह स्पष्ट है कि वैदिक काल से हमारे देश में धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा का विशेष स्थान है। इस पर लिखा गया इतिहास का स्वरूप बड़ा विशाल होगा, यहाँ के ऋषि मुनियों के विषय में हमें कुछ भी प्राप्त जानकारी नहीं है, क्योंकि उनके द्वारा स्वयं के बारे में कुछ भी नहीं लिखा गया ना ही उन्होंने दूसरों से लिखवाया फिर भी उनके द्वारा जो संस्कार दिये गये उसका प्रभाव निरन्तर समाज पर बना रहा, यही कारण है कि इतिहास से प्राचीन परम्परा है।

ग्रामीण जनजीवन पर आधरित परम्परा, संस्कृति ही मनुष्य जीवन का आधार है। यह निरन्तर उसके साथ एक समाज के रूप में चलती है और संस्कृति के रूप में जन्म लेती है। संस्कृति का एक अंग कला भी है। प्रत्येक कला में अनुकृति के सर्जन के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों में परम्परागत तत्व अवश्य होते हैं, किसी भी स्थान की कला को समझने के लिये पहले उस स्थान की संस्कृति एवं परम्परा को समझा जाये तो हमें कलाकार द्वारा बनाई गई कलाकृति को समझने में सरलता होगी, जैसे भारतीय चित्रकला का नाम आते ही इसमें धार्मिक, आध्यात्मिक परम्परा का आभास हो जाता है, चाहे वह प्राचीन कला हो या वर्तमान समय की कला सदैव ही इसने भारतीय संस्कृति को संजोये रखा है, फिर भी समय के परिवर्तन के साथ कुछ परिवर्तन कलाकारों में भी आते हैं, जिसका प्रभाव उनकी कला पर भी अवश्य पड़ता है। अगर हम भारतीय चित्र परम्पराओं का अध्ययन करते है तो अंजता के भित्ति चित्रों पर ध्यान ना जाये ऐसा सम्भव नहीं है। अंजता के चित्रों का निर्माण बौद्ध अनुयायीयों के द्वारा उनकी विष्णु जी एवं बुद्ध के प्रति उनकी आस्था के प्रतीक हैं, जिनकों आज भी देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय के मानव की कलात्मक सोच का कोई अन्त ना था। ये चित्र इतने सजीव हैं कि हमें इनको देखकर गर्व होता है कि यह भारत की चित्र परम्परा की एक धरोहर है। इस समय पर चित्र को भित्तियों पर बनाया जाता था, यहीं से भित्ति चित्रों का प्रारम्भिक समय माना जा सकता है।

यही प्रराम्भ हमारे मानवीय जीवन में लोक चित्रों में दिखाई देने लगा। जब मनुष्य सभ्यता संस्कारों में जीवन यापन करने की कला सीख रहा था। उसी समय में उसके द्वारा लोक चित्र के प्रति रुचि ने जन्म लिया और वह त्यौहारों, उत्सवों में चित्रों के द्वारा अपने भाव प्रकट करने लगा। इस तरह यह क्रम सम्पूर्ण भारत के लोक चित्रों में भी देखा जा सकता है।

आज चित्रकला में भी कुछ परिवर्तन अवश्य ही परिलक्षित होते हैं। दैनिक प्रयोग में आने वाली वस्तुओं को चित्रकला के प्रयोग में लाया जाने लगा है, लेकिन नवीन प्रयोगों को प्राचीन परंपरा से जोड़कर ही नवीन स्वरूप दिया जा रहा है। कलाओं की परंपरा का दूसरा आवश्यक तत्व व्यंजना की पद्धति है, जिसमें लगातार परिवर्तन आते गए हैं और जिसमें मनुष्य की भावगत क्रियाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। आज कविता में शब्द चमत्कार की नवीन परंपरा और भाव की व्यंजना

ISSN:.....(Online) | Volume -1| Issue- 1| January-February 2025|pp.1-5
Bimonthly, Hindi language, Blind Peer Reviewed E Research Journal

के भी नवीन रूप घटनाक्रम में पाए जाते हैं। कलाकार इनकी अपनी अभिव्यक्ति का आधार बनता है।

चित्रकला में विषय के अधीन आकृतियों को रंग रेखा एवं प्रकाश के माध्यम से नवीन तकनीक की परंपरा में प्रस्तुत किया जा रहा है। यह मानना ही पड़ेगा कि परंपरागत तत्व सदैव ही प्रचलित रहे हैं और उनके स्वरूप में परिस्थितियों के परिवर्तन के अधीन, परिवर्तन भी आते हैं, लेकिन उन्हें प्रस्तुत करने की पद्धतियां परंपरागत तत्वों से कभी अलग नहीं हो सकती है। परंपरा की परीलक्षणा का तीसरा तत्व संस्कृति का स्वरूप माना गया है। देश की संस्कृति देश की समृद्धि और उन्नति पर ही आधारित रहती है जो समाज को कला का स्वरूप प्रदान करती है। सांस्कृतिक मूल्य ही परंपरा बनाते हैं। जो जीवन और कला को समान रूप से प्रभावित किया करते हैं और जिनके द्वारा किसी भी समाज के उत्थान और पतन का अध्ययन सरलता से किया जा सकता है। अनेक अवसरों पर यूनानी कला परंपरा के अधीन नवीन तकनीक एवं शैलियों को विकसित होने का अवसर मिला है।

भारतीय चित्रकला में धर्म और अध्यात्म के तत्व आज भी परंपरागत रूप में विद्यमान है जिसका श्रेय ग्रामीण जनजीवन को जाता है। चित्रण की सैद्धांतिकता के पीछे जो परंपरा मध्यकाल तक चली है उसमें अब शिथिलता आती दिखलाई दे रही है। सौंदर्य का आकर्षण संगीत का माधुर्य, नृत्य की लय और चित्रकला की अभिव्यक्ति मानव की सुंदर भावनाओं को सदैव अपनी और आकर्षित करती रहती है।

आज का कलाकार अपने बौद्धिक तर्क से कला को अति जटिल एवं सर्वसाधारण की समझ की सीमा से परे की वस्तु बनाने में संलग्न है किंतु दूसरी ओर लोक परंपरा अपने रचनात्मक पक्ष से नैसर्गिक अभिव्यक्ति का मार्ग खोज ही निकालती है, जो कि जीवन विस्मृत और आत्म सुख का एकमात्र साधन है, परन्तु इसका कला की उच्चतम असाधारण एवं असामान्य मान्यताओं से कोई भी संबंध नहीं है हर्ष और उल्लास से भर कर उन्हें अनेक चित्रों को जनजीवन में चित्रित किया गया है, जो भीतर से लोगों के विश्वास और जन स्मृतियों के क्रमागत इतिहास को समेटे हुए हैं, एवं भाव व्यंजना की दृष्टि से जिनकी क्षमता कर पाना अति कठिन है। इनका संबंध मानव की भावनाओं से सीधा है जिन्हें वह परंपरागत रूढ़ियों के रूप में प्रचलित करना चाहता है क्योंकि मानव का यह स्वभाव है कि वह अपनी प्राचीन संस्कृति धर्म और कला को सदैव जीवित रखना चाहता है, जिसमें ग्रामीण जनजीवन हमेशा ही महत्वपूर्ण योगदान देता आया है।

ग्रामीण जनजीवन एवं लोक चित्र

लोक कला हमारे जीवन में उत्साह वृद्वि करने की एक प्रक्रिया के रूप में हमेशा हमारे साथ-साथ चलती रही है, परन्तु फिर भी हम लोक कला के अर्थ को समझने का प्रयास करेंगे। सर्वप्रथम हमें उसमें छिपे अर्थ को जानना चाहिये। लोक कला दो शब्दों से मिलकर बनी है। लोक कला जैसा कि लोक का अर्थ संस्कृत में देखने वाला या दर्शक है, जिसे साधारण शब्दों में लोक दर्शन कहा गया है, लोक शब्द का प्रयोग एक जन समूह के लिये किया जाता है, जो साधारण जीवन व्यतीत करते हैं तथा अपने जीवन यापन की वस्तुयें स्वयं एकत्रित करते हैं, ऐसे लोग उत्सव, त्यौहार, पूजा-पाठ या दुःख के समय एक साथ मिलकर उसे जीते हैं। इसलिये इन्हें लोक कहा जाता है।

'लोक' शब्द का जन्म संस्कृत से हुआ माना जा सकता है। हिन्दूओं के मुख्य ग्रंथ गीता में भी लोक संग्रह तथा लोक शब्द का कई बार प्रयोग किया गया है, जो लोक शब्द की प्राचीनता दिखाता है।

कर्मणैव हिं संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकड्.ग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि ।।

ISSN:.....(Online) | Volume -1| Issue- 1| January-February 2025|pp.1-5
Bimonthly, Hindi language, Blind Peer Reviewed E Research Journal

वेदों में भी लोक शब्द की प्राचीनता के प्रमाण मिले हैं। ऋगवेद में लोक शब्द का अनेक बार उपयोग हुआ है। वेदों में लोक का अर्थ जन्म शब्द के रूप में भी माना गया है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'लोक' शब्द का प्रयोग उन लोगों के लिये किया है, जो सरल साधारण होते हैं। ये कठोर परिश्रमी स्वयं पर विश्वास रखने वाले होते हैं, और दूसरी ओर "डॉ कुंडा बिहारी दास' के अनुसार 'लोक' शब्द उन लोगों के लिये प्रयोग होना चाहिए जो अपनी पुरातन संस्कृति के साथ ही जीते हैं।

महर्षि पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी' में लोक तथा 'सर्वलोक' शब्दों का प्रयोग कई स्थानों पर किया है, तथा प्रत्यय करने पर 'लौकिक 'तथा 'सर्वलौकिक 'शब्दों की उत्पत्ति की है। 'महर्षि व्यास' द्वारा रचित हिन्दुओं के प्रमुख ग्रंथ रामायण के पढ़ने से अज्ञान रूपी अंधकार सामान्य जनता या लोक की आखों से ऐसे दूर हो जाता है, जैसे आँखों से अंजन। ज्ञान रूपी सलाई द्वारा साफ करने से आंखें साफ एवं स्वच्छ हो जाती हैं-

"अज्ञान तितिरान्धस्य, लोकस्य तु विचेष्टतः।
ज्ञानाजन शलाकाभि, नेत्रों मीलन कारकम्।।

इस प्रकार हमने लोक शब्द का अर्थ जानने का प्रयास किया, जिससे हमें यह ज्ञात हुआ कि समय चाहे जो भी रहा हो लोक शब्द परिवर्तित नहीं हुआ है, यही हर समाज को पहचान देता है, क्योंकि लोक से ही मनुष्य अपनी मान्यताओं एवं परम्पराओं को संरक्षित कर सकता है। अब हमारे द्वारा लोक कला के दूसरे शब्द 'कला' का अर्थ जानने का प्रयास भी किया गया है जो इस प्रकार है-

भारत में पायी जाने वाली लोक कलायें आधुनिक समय में भी अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं। लोक कलायें हमेशा से ही अपने साथ कई कथायें लिये हुये चलती हैं, जिनमें प्राचीन समय से वर्तमान समय तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। यही कारण है की उन्हें परंपरागत कला भी कहा जाता है। परन्तु यह कहना भी गलत नहीं होगा की लोक कला पर शास्त्रीय कला का प्रभाव आने लगा है। हमें लोक कलाओं को संरक्षित रखने के प्रयत्न करना आवश्यक हो जाता है। क्योंकि यह कलायें हमें आदिवासी या केवल गाँव में ही अपनी वास्तविक रूप में मिलती है।

अन्त्तराष्ट्रीय स्तर पर हमेशा से ही लोक साहित्य की चर्चा हुई परन्तु किसी का भी ध्यान लोक कला की ओर नही गया। तब 1932 में जर्मनी के विद्वान कॉनरेड ने लोक कला की ओर सबका ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया। 18वीं सदी से ही विद्वानों का आकर्षण लोक साहित्य रहा परन्तु उस समय तक लोक कला का अस्तित्व नकारा गया।

19वीं सदी मे विद्वानों ने लोक कथाओं में अपनी रुचि दिखाई, जिसमें 'जॉन रस्किन' प्रथम थे। उन्होंने इन लोक कथाओं को समाज के निर्माण में उपयोगी माना एवं उसे विद्वानों के द्वारा आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया गया। परिणाम स्वरूप यूरोप में लोक कलाओं को राष्ट्रीय कला के रूप में अपनाया जाने लगा तथा लोक कलाओं की प्रशंसा सम्पूर्ण राष्ट्र में कि जाने लगी। 1885 में जो भी शोध किये गये। उनमें यह प्रमाण मिलता है कि लोक कला का अध्ययन कार्य सर्वप्रथम 'एल.ओ.एस.रियल ' द्वारा किया गया था। उन्होंने लोक कला परम्पराओं को व्यक्तिवादी सिद्धान्त से जुड़ा माना। उनके अनुसार लोक कला के जीवित होने का कारण ग्रामीण जनजीवन पर आधारित लोक चित्र परंपरा ही है।

निष्कर्ष

लोक कलाकार चित्रों को आकार देते समय इतने खो जाते हैं कि वे भूल जाते हैं उन्होंने कितना ज्यादा अलंकरण कर दिया है। ये कलायें हमेशा समूह में रहकर बनाने की जो परम्परा रही है, उससे लोगों की

ISSN:.....(Online) | Volume -1| Issue- 1| January-February 2025|pp.1-5
Bimonthly, Hindi language, Blind Peer Reviewed E Research Journal

रुचि भी लोक कलाओं में बढ़ने लगी और वे अपने जीवन में इसका प्रयोग प्रत्येक क्षण करने लगे परन्तु हमारे समाज में आधुनिकता की चमक से उच्च वर्ग के लोग इसे केवल गाँव में कि जाने वाली कला या अनपढ़ लोगों की कला के रूप में ही स्थान देते हैं, परन्तु वह यह भूल रहे हैं कि मानव का अस्तित्व ही इन कलाओं के द्वारा सामने आया है। लोक कला कि यह विशेषता है, कि इसे कोई डर नहीं होता है कि आर्थिक स्थिति जैसी भी हो वह इसके विकास में बाधा कभी नहीं बनेगी। प्राचीन काल से लेकर अभी तक भारतीय लोक चित्रकला अपना अस्तित्व बनाये हुये है।मेरा मानना है हमें बदलाव करने चाहिए परन्तु साथ में अपनी संस्कृति और परंपरा से भी जुड़ा रहना चाहिए। मेरे द्वारा यह आशा की जा रही है कि इस लघु शोधपत्र के द्वारा आगामी शोधार्थियों को लाभान्वित किया जा सकेगा।

संदर्भ सूची -

1. वर्मा, महेंद्र, (2006), भारतीय चित्रकला की परंपरा, पृ.सं.-13।

2. श्रीवास्तव, ए.,ल.,(1999), भारतीय कला प्रतीक, पृ.सं.-105।

3. श्रीवास्तव, ए. एल., भारतीय संस्कृति और शिल्प, पृ.सं-.22,24,87

4. solosolution.net, उत्तराखंड में कला और संस्कृति।

5. प्रताप, रीता,(2020), भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, पृ.सं.-3।

6. श्रीवास्तव, ए.एल.,(2001), भारतीय कला-संपदा, पृ.सं.-165।

7. सिंघानिया, नितिन, (2018), भारतीय कला और संस्कृति, पृ.स-2.27।